(2011] 13 (अतिरिक्त) एस.सी.आर. 247

शिव शंकर सिंह

बनाम

बिहार राज्य एवं एक अन्य

(2011 की दांडिक अपील सं. 2160)

नवंबर 22, 2011

[डॉ. बी.एस. चौहान तथा टी.एस. ठाकुर, न्यायमूर्तिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 :

अध्याय XV - द्वितीय विरोध याचिका - पोषणीयता - दण्डाधिकारी द्वारा संज्ञान लेना तथा समन निर्गत करना - अभिनिर्धारित: विरोध याचिका को सदैव परिवाद के रूप में ग्रहण किया जा सकता है तथा दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XV के प्रावधानों के अनुसार कार्यवाही की जा सकती है - अतः जहाँ द्वितीय परिवाद को ग्रहण करने पर कोई निषेध नहीं है, अपवादात्मक परिस्थितियों में द्वितीय विरोध याचिका को भी समान रूप से ग्रहण किया जा सकता है - वर्तमान वाद में उच्च न्यायालय ने दण्डाधिकारी द्वारा संदर्भित साक्ष्य का संज्ञान लिए बिना, इस तकनीकी आधार पर कि द्वितीय विरोध याचिका पोषणीय नहीं थी, दण्डाधिकारी के आदेश को अपास्त कर दिया, इस तथ्य पर विचार किए बिना कि प्रथम विरोध याचिका अंतिम प्रतिवेदन के दाखिल होने से पूर्व दायर की गई थी और सक्षम नहीं थी - इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने बिना किसी औचित्य के दण्डाधिकारी के विरुद्ध व्यापक टिप्पणियाँ कीं, जो वाद के तथ्य एवं परिस्थितियों में अनुचित एवं अवांछित हैं - उच्च न्यायालय का आदेश अपास्त किया जाता है तथा दण्डाधिकारी का आदेश पुनर्स्थापित किया जाता है - कठोर टिप्पणियाँ।

प्राथमिकी :

एक ही घटना के संबंध में दो प्राथमिकी - अभिनिर्धारितः एक ही घटना के संबंध में भिन्न कथन होने की स्थिति में अन्य प्राथमिकी का पंजीकरण अनुमन्य है।

एक घटना के संबंध में दो प्राथमिकी पंजीकृत की गईं, जिसमें अपीलार्थी के भतीजे 'जी.एस.' की दिनांक 6.12.2004 की रात्रि में मृत्यु हो गई - एक प्राथमिकी उसी रात्रि अपीलार्थी द्वारा दर्ज कराई गई, जिसमें यह कथन किया गया कि अपीलार्थी के घर तथा अपीलार्थी के भाई 'के.एस.' के घर में उत्तरदाता संख्या 2 एवं अन्य व्यक्तियों द्वारा डकैती की गई, जिसमें अनेक बहुमूल्य संपत्तियाँ लूटी गईं तथा 'जी.एस.' की हत्या डकैतों द्वारा की गई; तथा अन्य प्राथमिकी दिनांक 29.12.2004 को 'के.एस.', जो मृतक के पिता थे, द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 156(3) के अंतर्गत दायर वाद के परिणामस्वरूप पंजीकृत की गई, जिसमें यह कथन किया गया कि अपीलार्थी तथा अपीलार्थी के सहयोगियों द्वारा 'जी.एस.' की हत्या की गई, क्योंकि आरोपी अचल संपत्ति पर कब्जा करना चाहते थे। अपीलार्थी द्वारा दिनांक 4.4.2005 को एक विरोध याचिका दायर की गई; परंतु उस पर कोई आदेश पारित नहीं किया गया। दिनांक 6.12.2004 की प्राथमिकी में अन्वेषण के परिणामस्वरूप पुलिस द्वारा दिनांक 9.4.2005 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अंतर्गत अंतिम प्रतिवेदन प्रस्तुत किया गया, जिसमें यह प्रतिवेदित किया गया कि वाद पूर्णतः मिथ्या है तथा 'जी.एस.' की हत्या संपत्ति विवाद के कारण की गई। अन्य प्राथमिकी के संबंध में पुलिस द्वारा अन्वेषण पूर्ण करने के पश्चात दिनांक 29.8.2005 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 302/34 तथा 506 आदि के अंतर्गत अपीलार्थी तथा अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया। तथापि, विचारण अभियुक्त व्यक्तियों के पक्ष में समाप्त हुआ। दिनांक 22.9.2005 को अपीलार्थी द्वारा दिनांक 9.4.2005 के अंतिम प्रतिवेदन के संबंध में द्वितीय विरोध याचिका दायर की गई। दण्डाधिकारी द्वारा दिनांक 2.8.2008 के आदेश द्वारा संज्ञान लिया गया तथा उत्तरदाता संख्या 2 एवं अन्य व्यक्तियों को

समन निर्गत किया गया। दिनांक 2.8.2008 के आदेश को अभिखंडित किए जाने हेतु उत्तरदाता संख्या 2 द्वारा दायर दांडिक याचिका को उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर स्वीकृत किया गया कि द्वितीय विरोध याचिका संधारणीय नहीं थी तथा अपीलार्थी को दिनांक 4.4.2005 की प्रथम विरोध याचिका का अनुसरण करना चाहिए था।

अपील अनुज्ञात करते हुए, न्यायालय द्वारा :

अभिनिर्धारित: 1. विधि एक ही घटना के संबंध में दो प्राथमिकी के पंजीकरण एवं अन्वेषण को निषिद्ध नहीं करती, यदि कथन भिन्न हों। समानता की कसौटी लागू की जानी चाहिए, अन्यथा प्रति-वाद एवं प्रति-प्रकरण संभव नहीं होंगे। अतः एक ही घटना के संबंध में भिन्न कथन होने की स्थिति में अन्य प्राथमिकी का दाखिल किया जाना अनुमन्य है। [कंडिका 6] [255-ए-सी]

राम लाल नारंग बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन), ए.आई.आर. 1979 एससी 1791; *सुधीर एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य,* 2001 (1) एस.सी.आर. 813 = ए.आई.आर. 2001 एससी 826; *टी. टी. एंटनी बनाम केरल राज्य एवं अन्य,* 2001 (3) एस.सी.आर. 942 = ए.आई.आर. 2001 एससी 2637; *उपकार सिंह बनाम वेद प्रकाश एवं अन्य,* ए.आई.आर. 2004 एससी 4320; तथा *बाबुभाई बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य,* 2010 (10) एस.सी.आर. 651 = (2010) 12 एस.सी.सी. 254 - अवलंबित।

जॉय कृष्ण चक्रवर्ती एवं अन्य बनाम राज्य एवं एक अन्य, 1980 दांडिक विधि पत्रिका 482 - विभेदित।

2.1 सूचक वह व्यक्ति है जो अन्वेषण के परिणाम में हितबद्ध होता है। यदि दण्डाधिकारी यह दृष्टिकोण ग्रहण करता है कि आगे कार्यवाही करने हेतु पर्याप्त आधार नहीं है तथा कार्यवाही को समाप्त कर देता है, तो सूचक निश्चय ही प्रतिकूल रूप से प्रभावित होगा और, अतः, सूचक को सुने जाने का अधिकार है। [कंडिका 9] [256-बी-सी]

भगवंत सिंह बनाम पुलिस आयुक्त एवं एक अन्य, **ए.आई.आर. 1985 एससी 1285 - अवलंबित।**

2.2 इस न्यायालय के निर्णयों से यह स्पष्ट है कि विधि समान तथ्यों पर भी द्वितीय परिवाद के दायर किए जाने या ग्रहण किए जाने को निषिद्ध नहीं करती, बशर्ते कि पूर्ववर्ती परिवाद अपर्याप्त सामग्री के आधार पर विनिश्चित किया गया हो या आदेश परिवाद की प्रकृति को समझे बिना पारित किया गया हो या संपूर्ण तथ्य न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किए जा सके हों या जहाँ परिवादी को प्रथम परिवाद के निस्तारण के पश्चात ऐसे तथ्य ज्ञात हुए हों जो परिवादी के पक्ष में संतुलन को परिवर्तित कर सकते थे। तथापि, जहाँ पूर्ववर्ती परिवाद परिवादी के प्रकरण के गुण-दोष पर पूर्ण विचार के पश्चात निस्तारित किया गया हो, वहाँ द्वितीय परिवाद पोषणीय नहीं होगा। [कंडिका 13] [257-एफ-जी]

बिंदेश्वरी प्रसाद सिंह बनाम काली सिंह, **1977 (1) एस.सी.आर. 125 = ए.आई.आर. 1977 एससी 2432;** *भगवंत सिंह बनाम पुलिस आयुक्त एवं एक अन्य,* **ए.आई.आर. 1985 एससी 1285;** *प्रमथ नाथ तलुकदार बनाम सरोज रंजन सरकार,* **1962 अनुपूरक एस.सी.आर. 297 = ए.आई.आर. 1962 एससी 876;** *महेश चंद बनाम बी. जनार्दन रेड्डी एवं एक अन्य,* **2002 (4) अनुपूरक एस.सी.आर. 566 = ए.आई.आर. 2003 एससी 702;** *पूनम चंद जैन एवं एक अन्य बनाम फजरू,* **2004 (5) अनुपूरक एस.सी.आर. 525 = ए.आई.आर. 2005 एससी 38;** *जतिंदर सिंह एवं अन्य बनाम रणजीत कौर,* **2001 (1) एस.सी.आर. 707 = ए.आई.आर. 2001 एससी 784;** *रणवीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य,* **(2009) 9 एस.सी.सी. 642**

2.3 विरोध याचिका को सदैव परिवाद के रूप में ग्रहण किया जा सकता है तथा दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XV के प्रावधानों के अनुसार कार्यवाही की जा सकती है। अतः, जहाँ समान तथ्यों पर द्वितीय परिवाद को ग्रहण करने पर कोई निषेध नहीं है, अपवादात्मक

परिस्थितियों में द्वितीय विरोध याचिका को भी केवल अपवादात्मक परिस्थितियों में समान रूप से ग्रहण किया जा सकता है। यदि प्रथम विरोध याचिका वाद के निर्णय हेतु आवश्यक पूर्ण तथ्य/विवरण प्रस्तुत किए बिना दायर की गई हो, तथा न्यायालय द्वारा ग्रहण किए जाने से पूर्व पूर्ण विवरण सहित नवीन विरोध याचिका दायर की जाए, तो ऐसी याचिका को अपोषणीय नहीं कहा जा सकता। [कंडिका 14] [258-ए-बी]

2.4 दिनांक 2.8.2008 को दण्डाधिकारी द्वारा पारित आदेश अपीलार्थी तथा अत्यधिक संख्या में साक्षियों द्वारा दिए गए परिसाक्ष्य पर आधारित है। इसके अतिरिक्त, 2005 की सत्र विचारण सं. 866 का अभिलेख, जिसमें अपीलार्थी स्वयं विचारण का सामना कर चुका था, दण्डाधिकारी द्वारा तलब किया गया तथा परीक्षण किया गया। दण्डाधिकारी ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर यह निर्णीत किया कि अभियुक्तों के विरुद्ध कार्यवाही करने हेतु सामग्री उपलब्ध है तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अंतर्गत प्रथम दृष्ट्या प्रकरण समस्त अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध निर्मित होता है। अतः दण्डाधिकारी ने समन निर्गत करने का निर्देश दिया। परंतु उच्च न्यायालय ने उक्त साक्ष्य का संज्ञान लिए बिना, इस तकनीकी आधार पर कि द्वितीय विरोध याचिका पोषणीय नहीं थी, दण्डाधिकारी के आदेश को अपास्त कर दिया, इस तथ्य पर विचार किए बिना कि प्रथम विरोध याचिका अंतिम प्रतिवेदन के दाखिल होने से पूर्व दायर की गई थी और सक्षम नहीं थी। इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने बिना किसी औचित्य के कुछ टिप्पणियाँ कीं। दण्डाधिकारी के विरुद्ध इस प्रकार की व्यापक टिप्पणियाँ करने का कोई अवसर उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं था तथा उक्त टिप्पणियाँ वाद के तथ्य एवं परिस्थितियों में अनुचित एवं अवांछित हैं। उच्च न्यायालय का आदेश अपास्त किया जाता है तथा दण्डाधिकारी का आदेश पुनर्स्थापित किया जाता है। [कंडिका 14 एवं 16] [258-ए-एच; 259-ए-सी]

न्यायिक दृष्टान्त :

1980 दांडिक विधि पत्रिका 482	**विभेदित**	**कंडिका 3**
ए.आई.आर. 1979 एससी 1791	**अवलंबित**	**कंडिका 6**
2001 (1) एस.सी.आर. 813	**अवलंबित**	**कंडिका 6**
2001 (3) एस.सी.आर. 942	**अवलंबित**	**कंडिका 6**
ए.आई.आर. 2004 एससी 4320	**अवलंबित**	**कंडिका 6**
2010 (10) एस.सी.आर. 651	**अवलंबित**	**कंडिका 6**
ए.आई.आर. 1985 एससी 1285	**अवलंबित**	**कंडिका 9**
1977 (1) एस.सी.आर. 125	**अवलंबित**	**कंडिका 10**
1962 अनुपूरक एस.सी.आर. 297	**अवलंबित**	**कंडिका 10**
2002 (4) अनुपूरक एस.सी.आर. 566	**अवलंबित**	**कंडिका 11**
2004 (5) अनुपूरक एस.सी.आर. 525	**अवलंबित**	**कंडिका 11**
2001 (1) एस.सी.आर. 707	**अवलंबित**	**कंडिका 12**
(2009) 9 एस.सी.सी. 642	**अवलंबित**	**कंडिका 12**

दांडिक अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2011 की दांडिक अपील सं. 2160

पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 06.05.2009 के निर्णय एवं आदेश, जो दांडिक विविध वाद सं. 36335 वर्ष 2008 में पारित किया गया।

गौरव अग्रवाल - अपीलार्थी की ओर से।

अवनीश सिंह, गोपाल सिंह, रवि भूषण - उत्तरदाताओं की ओर से।

न्यायालय का निर्णय निम्न द्वारा प्रदत्त

माननीय न्यायमूर्ति डॉ. बी.एस. चौहान 1. यह अपील पटना उच्च न्यायालय द्वारा दांडिक विविध वाद सं. 36335 वर्ष 2008 में पारित निर्णय एवं आदेश दिनांक 6.5.2009 के

विरुद्ध दायर की गई है, जिसके द्वारा दण्डाधिकारी द्वारा दिनांक 2.8.2008 के आदेश से भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 395 के अंतर्गत उत्तरदाता संख्या 2 के विरुद्ध लिया गया संज्ञान अभिखंडित कर दिया गया।

2. इस वाद को उत्पन्न करने वाले तथ्य एवं परिस्थितियाँ निम्न हैं :

ए. दिनांक 6.12.2004 को वर्तमान अपीलार्थी शिवशंकर सिंह तथा अपीलार्थी के भाई कामेश्वर सिंह के घर में डकैती की घटना हुई, जिसमें कामेश्वर सिंह के पुत्र गोपाल सिंह की डकैतों द्वारा हत्या कर दी गई तथा अनेक बहुमूल्य संपत्तियाँ लूटी गईं। पुलिस लगभग 3.00 बजे प्रातः, अर्थात घटना के लगभग 2 घंटे पश्चात, घटनास्थल पर पहुँची। दिनांक 6.12.2004 की प्राथमिकी सं. 147/2004 अपीलार्थी द्वारा रामाकांत सिंह तथा आनंद कुमार सिंह सहित 15 अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 396/398 के अंतर्गत दर्ज कराई गई।

बी. तथापि, कामेश्वर सिंह, जो अपीलार्थी के वास्तविक भाई तथा मृतक गोपाल सिंह के पिता थे, ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 156(3) के अंतर्गत वाद दायर कर न्यायालय का आश्रय लिया। उक्त वाद में पारित आदेशों के अनुसरण में उसी घटना के संबंध में दिनांक 29.12.2004 को प्राथमिकी सं. 151/2004 दर्ज की गई, जिसमें यह आरोप लगाया गया कि वर्तमान अपीलार्थी, भोला सिंह, जो द्वितीय परिवादी का पुत्र था, तथा भोला सिंह के मामा शंकर ठाकुर ने गोपाल सिंह की हत्या की, क्योंकि आरोपी अचल संपत्ति पर कब्जा करना चाहते थे।

सी. दोनों प्रतिवेदनों के अनुसरण में अन्वेषण प्रारंभ हुआ। जब दोनों प्राथमिकी के अनुसरण में अन्वेषण लंबित था, तब अपीलार्थी ने दिनांक 4.4.2005 को विरोध याचिका दायर की, परंतु अपीलार्थी ने उक्त प्रकरण का अनुवर्तन नहीं किया। न्यायालय ने उक्त याचिका पर कोई आदेश पारित नहीं किया। दिनांक 6.12.2004 की प्रतिवेदन में अन्वेषण पूर्ण करने

के पश्चात पुलिस ने दिनांक 9.4.2005 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अंतर्गत अंतिम प्रतिवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें यह प्रतिवेदित किया गया कि वाद पूर्णतः मिथ्या है तथा गोपाल सिंह की हत्या संपत्ति विवाद के कारण हुई।

डी. मृतक के पिता कामेश्वर सिंह द्वारा दायर अन्य प्राथमिकी में अन्वेषण पूर्ण करने के पश्चात दिनांक 29.8.2005 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 302/34, 506 आदि के अंतर्गत अपीलार्थी, परिवादी के पुत्र भोला सिंह तथा अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया। विचारण उपरांत उक्त प्रकरण अभियुक्त व्यक्तियों के पक्ष में समाप्त हुआ।

ई. दिनांक 22.9.2005 को अपीलार्थी ने दिनांक 9.4.2005 के अंतिम प्रतिवेदन के संबंध में द्वितीय विरोध याचिका दायर की। उक्त याचिका पर विचार करने तथा अत्यधिक संख्या में साक्षियों का परीक्षण करने के पश्चात दण्डाधिकारी ने दिनांक 2.8.2008 के आदेश द्वारा उत्तरदाता आनंद कुमार सिंह एवं अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध संज्ञान लिया तथा समन निर्गत किया।

एफ. आदेश दिनांक 2.8.2008 से व्यथित होकर उत्तरदाता आनंद कुमार सिंह ने उक्त आदेश को अभिखंडित किए जाने हेतु 2008 की दांडिक विविध वाद सं. 36335 दायर की, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर अनुज्ञात किया गया कि द्वितीय विरोध याचिका पोषणीय नहीं थी तथा अपीलार्थी को दिनांक 4.4.2005 की प्रथम विरोध याचिका का अनुसरण करना चाहिए था।

अतः, यह अपील दायर की गई है।

3. श्री गौरव अग्रवाल, अपीलार्थी की ओर से उपस्थित अधिवक्ता, ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय इस तथ्य की सराहना करने में विफल रहा कि तथाकथित प्रथम विरोध याचिका अंतिम प्रतिवेदन के दाखिल होने से पूर्व दायर की गई थी, अतः पोषणीय नहीं थी

तथा उसे उपेक्षित किया जाना चाहिए था। माननीय दण्डाधिकारी ने यथोचित रूप से उक्त विरोध याचिका के आधार पर कार्यवाही नहीं की तथा उक्त विरोध याचिका मात्र अभिलेख में एक दस्तावेज के रूप में ही बनी रही। द्वितीय याचिका ही एकमात्र विरोध याचिका थी, जिसे ग्रहण किया जा सकता था, क्योंकि उक्त द्वितीय विरोध याचिका अंतिम प्रतिवेदन के दाखिल होने के पश्चात दायर की गई थी। उच्च न्यायालय ने यह अवलोकन करते हुए भी त्रुटि की कि दण्डाधिकारी द्वारा उत्तरदाता संख्या 1 को समन निर्गत करने का आदेश अस्पष्ट था तथा यह स्पष्ट नहीं था कि आदेश किस विरोध याचिका में पारित किया गया था। इसके अतिरिक्त, *जॉय कृष्ण चक्रवर्ती एवं अन्य बनाम राज्य एवं एक अन्य,* 1980 दांडिक विधि पत्रिका 482, जो कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा निर्णीत किया गया था तथा जिस पर उच्च न्यायालय ने पूर्णतया अवलंब किया, के तथ्य वर्तमान वाद से विभेद्य थे, क्योंकि उक्त वाद में प्रथम विरोध याचिका दण्डाधिकारी द्वारा ग्रहण की गई थी तथा उस पर आदेश पारित किया गया था। विरोध याचिका को परिवाद के रूप में माना जाना है तथा विधि समान तथ्यों पर भी कतिपय परिस्थितियों में द्वितीय परिवाद के दायर किए जाने तथा ग्रहण किए जाने को निषिद्ध नहीं करती। अतः आक्षेपित निर्णय एवं आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

4. इसके विपरीत, श्री अवनीश सिन्हा तथा श्री गोपाल सिंह, उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित अधिवक्ताओं ने प्रबल विरोध करते हुए यह प्रतिवाद किया कि द्वितीय याचिका पोषणीय नहीं थी तथा अपीलार्थी को प्रथम विरोध याचिका का अनुसरण करना चाहिए था। उच्च न्यायालय ने यथोचित रूप से यह अवलोकन किया कि दण्डाधिकारी द्वारा उत्तरदाता संख्या 1 तथा अन्य व्यक्तियों को समन निर्गत करने का आदेश पूर्णतः अस्पष्ट था। अन्यथा भी, चूँकि अपीलार्थी स्वयं उसी घटना के संबंध में दांडिक विचारण का सामना कर चुका था, अतः अपीलार्थी को विरोध याचिका दायर करने हेतु सक्षम/अर्ह व्यक्ति नहीं माना जा सकता। अपीलार्थी ने स्वयं अपराध कारित करने के पश्चात तत्परता से मिथ्या प्राथमिकी दर्ज कराई।

अतः वाद के तथ्य इस न्यायालय द्वारा किसी प्रकार के हस्तक्षेप की अपेक्षा नहीं करते तथा दांडिक अपील खारिज किए जाने योग्य है।

5. पक्षकारों के अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत परस्पर प्रतिवादों पर विचार किया गया तथा अभिलेख का अवलोकन किया गया।

6. उत्तरदाताओं की ओर से प्रस्तुत इस प्रतिवाद में कोई बल नहीं पाया जाता कि चूँकि उसी घटना अर्थात डकैती तथा गोपाल सिंह की हत्या के संबंध में अपीलार्थी स्वयं अन्य व्यक्तियों के साथ दांडिक विचारण का सामना कर रहा है, अतः अपीलार्थी के कहने पर उत्तरदाता संख्या 1 के विरुद्ध कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती, क्योंकि एक ही घटना के संबंध में दो प्राथमिकी का पंजीकरण विधि में अनुमन्य नहीं है। इसका साधारण कारण यह है कि विधि एक ही घटना के संबंध में दो प्राथमिकी के पंजीकरण तथा अन्वेषण को निषिद्ध नहीं करती, यदि कथन भिन्न हों। समानता की कसौटी लागू की जानी चाहिए, अन्यथा प्रति-वाद तथा प्रति-प्रकरण संभव नहीं होंगे। अतः एक ही घटना के संबंध में भिन्न कथन होने की स्थिति में अन्य प्राथमिकी का दायर किया जाना अनुमन्य है। (देखें : *राम लाल नारंग बनाम राज्य (दिल्ली प्रशासन),* ए.आई.आर. 1979 एससी 1791; *सुधीर एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य,* ए.आई.आर. 2001 एससी 826; *टी. टी. एंटनी बनाम केरल राज्य एवं अन्य,* ए.आई.आर. 2001 एससी 2637; *उपकार सिंह बनाम वेद प्रकाश एवं अन्य,* ए.आई.आर. 2004 एससी 4320; तथा *बाबुभाई बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य,* (2010) 12 एस.सी.सी. 254)।

7. निःसंदेह, उच्च न्यायालय ने कलकत्ता उच्च न्यायालय के निर्णय *जॉय कृष्ण चक्रवर्ती एवं अन्य (उपरोक्त)* पर अत्यधिक अवलंब किया है, जिसमें दिनांक 19.3.1976 की विरोध याचिका दण्डाधिकारी द्वारा ग्रहण की गई थी तथा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(3) के अंतर्गत खानाकुल थाना प्रभारी को अन्वेषण करने तथा दिनांक 10.4.1976 तक संबंधित

न्यायालय में प्रतिवेदन प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था। उक्त थाना प्रभारी ने इस आधार पर कोई अन्वेषण नहीं किया कि घटना उक्त थाना की क्षेत्राधिकार सीमा के बाहर हुई थी। उसी परिवादी द्वारा दिनांक 23.3.1976 को दायर द्वितीय विरोध याचिका को भी दण्डाधिकारी द्वारा ग्रहण किया गया। वास्तव में, इसी तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में कलकत्ता उच्च न्यायालय ने यह निर्णीत किया कि दण्डाधिकारी प्रथम विरोध याचिका के आधार पर ही कार्यवाही कर सकता था तथा द्वितीय विरोध याचिका को ग्रहण नहीं किया जाना चाहिए था।

8. वर्तमान वाद के तथ्य पूर्णतः विभेद्य हैं। अतः , इस मामले के तथ्यों में उक्त फैसले का कोई मतलब नहीं है।

9. *भगवंत सिंह बनाम पुलिस आयुक्त एवं एक अन्य***,** ए.आई.आर. 1985 एससी 1285 में इस न्यायालय ने इस प्रश्न पर विस्तार से विचार किया, विनिर्दिष्ट याचिका को ग्रहण किया तथा अंतिम प्रतिवेदन को स्वीकार करने के संबंध में इस प्रतिवाद को स्वीकार किया कि यदि दण्डाधिकारी यह पाता है कि कोई प्रकरण निर्मित नहीं होता, तो परिवादी के नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होगा; अतः दण्डाधिकारी द्वारा कार्यवाही समाप्त करने से पूर्व सूचक को सुनवाई का अवसर दिया जाना आवश्यक है, क्योंकि सूचक को यह ज्ञात होना चाहिए कि प्रथम प्राथमिकी के आधार पर आरंभ किए गए अन्वेषण का परिणाम क्या है। सूचक अन्वेषण के परिणाम में हितबद्ध व्यक्ति है। अतः यदि दण्डाधिकारी यह दृष्टिकोण ग्रहण करता है कि आगे कार्यवाही करने हेतु पर्याप्त आधार नहीं है तथा कार्यवाही समाप्त कर देता है, तो सूचक निश्चित रूप से प्रतिकूल रूप से प्रभावित होगा, और इसलिए सूचक को सुने जाने का अधिकार है।

10. *बिंदेश्वरी प्रसाद सिंह बनाम काली सिंह,* ए.आई.आर. 1977 एससी 2432 में इस न्यायालय ने निर्णीत किया कि जहाँ कुछ नवीन तथ्य हों अथवा पूर्ववर्ती तथ्यों के आधार पर भी कोई विशेष प्रकरण निर्मित होता हो, वहाँ द्वितीय परिवाद प्रस्तुत किया जा सकता है।

इसी प्रकार, *प्रमथ नाथ तलुकदार बनाम सरोज रंजन सरकार,* ए.आई.आर. 1962 एससी 876 में इस न्यायालय ने निम्न प्रकार से निर्णीत किया :

> "दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 203 के अंतर्गत पारित निरसन का आदेश, समान तथ्यों पर द्वितीय परिवाद के ग्रहण किए जाने पर निषेध नहीं है, परंतु ऐसा परिवाद केवल अपवादात्मक परिस्थितियों में ही ग्रहण किया जाएगा; उदाहरणार्थ जहाँ पूर्व आदेश अपूर्ण अभिलेख पर पारित किया गया हो अथवा परिवाद की प्रकृति को गलत समझने के कारण पारित किया गया हो अथवा आदेश प्रत्यक्षतः अविवेकपूर्ण, अन्यायपूर्ण या मूर्खतापूर्ण हो, अथवा जहाँ ऐसे नवीन तथ्य, जिन्हें युक्तियुक्त परिश्रम के उपरांत भी पूर्ववर्ती कार्यवाही में अभिलेख पर नहीं लाया जा सका था, प्रस्तुत किए गए हों। यह न्यायहित में नहीं कहा जा सकता कि परिवादी के प्रकरण पर पूर्ण विचार के उपरांत उसके विरुद्ध निर्णय पारित हो जाने के पश्चात परिवादी अथवा कोई अन्य व्यक्ति को पुनः उसी परिवाद की जांच कराए जाने का एक और अवसर दिया जाए।"

11. उपर्युक्त निर्णय के साथ-साथ इस न्यायालय के विभिन्न अन्य निर्णयों पर विचार करने के पश्चात, *महेश चंद बनाम बी. जनार्दन रेड्डी एवं एक अन्य,* ए.आई.आर. 2003 एससी 702 में इस न्यायालय ने निम्न प्रकार से निर्णीत किया :

> "... यह विधि स्थापित है कि समान तथ्यों पर द्वितीय परिवाद दायर किए जाने पर कोई वैधानिक निषेध नहीं है। ऐसे प्रकरण में जहाँ पूर्ववर्ती परिवाद बिना कोई कारण निर्दिष्ट किए निरस्त कर दिया गया हो, दण्डाधिकारी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 204 के अंतर्गत अपराध का संज्ञान ले सकता है तथा यदि आगे कार्यवाही हेतु पर्याप्त आधार हो तो प्रक्रिया निर्गत कर सकता है ...."

पूनम चंद जैन एवं एक अन्य बनाम फजरू, ए.आई.आर. 2005 एससी 38 में भी इस न्यायालय द्वारा समान दृष्टिकोण पुनः व्यक्त किया गया।

12. *जतिंदर सिंह एवं अन्य बनाम रणजीत कौर,* ए.आई.आर. 2001 एससी 784 में इस न्यायालय ने निर्णीत किया कि अनुपस्थिति के कारण परिवाद के निरस्त किए जाने से समान तथ्यों पर नवीन परिवाद दायर किए जाने पर कोई निषेध नहीं उत्पन्न होता।

इसी प्रकार, *रणवीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य, (2009)* 9 एस.सी.सी. 642 में इस न्यायालय ने उस स्थिति में इस प्रश्न की परीक्षण की, जहाँ परिवादी द्वारा सेवा प्रभावी करने हेतु प्रक्रिया शुल्क जमा न किए जाने के कारण परिवाद निरस्त कर दिया गया था, तथा निर्णीत किया कि ऐसी तथ्यात्मक स्थिति में द्वितीय परिवाद पोषणीय है।

13. अतः यह स्पष्ट है कि विधि समान तथ्यों पर भी द्वितीय परिवाद के दायर किए जाने अथवा ग्रहण किए जाने को निषिद्ध नहीं करती, बशर्ते कि पूर्ववर्ती परिवाद अपर्याप्त सामग्री के आधार पर विनिश्चित किया गया हो अथवा आदेश परिवाद की प्रकृति को समझे बिना पारित किया गया हो अथवा संपूर्ण तथ्य न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किए जा सके हों अथवा जहाँ प्रथम परिवाद के निस्तारण के पश्चात परिवादी को ऐसे कुछ तथ्य ज्ञात हुए हों, जो परिवादी के पक्ष में संतुलन को परिवर्तित कर सकते थे। तथापि, जहाँ पूर्ववर्ती परिवाद परिवादी के प्रकरण के गुण-दोष पर पूर्ण विचार के उपरांत निस्तारित किया गया हो, वहाँ द्वितीय परिवाद पोषणीय नहीं होगा।

14. विरोध याचिका को सदैव परिवाद के रूप में माना जा सकता है तथा दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XV के प्रावधानों के अनुसार कार्यवाही की जा सकती है। अतः जहाँ समान तथ्यों पर द्वितीय परिवाद को ग्रहण करने पर कोई निषेध नहीं है, वहाँ अपवादात्मक परिस्थितियों में द्वितीय विरोध याचिका को भी केवल अपवादात्मक परिस्थितियों में समान रूप से ग्रहण किया जा सकता है। यदि प्रथम विरोध याचिका वाद के निर्णय हेतु आवश्यक पूर्ण तथ्य/विवरण प्रस्तुत किए बिना दायर की गई हो, तथा न्यायालय द्वारा ग्रहण किए जाने

से पूर्व पूर्ण विवरण सहित नवीन विरोध याचिका दायर की जाए, तो यह समझ में नहीं आता कि ऐसी विरोध याचिका को अपोषणीय क्यों माना जाए।

15. वर्तमान वाद का निर्णय उपर्युक्त स्थापित विधिक सिद्धांतों के आलोक में किया जाना आवश्यक है।

दिनांक 2.8.2008 को संबंधित दण्डाधिकारी द्वारा पारित आदेश अपीलार्थी शिवशंकर सिंह तथा अत्यधिक संख्या में साक्षियों, अर्थात सोनू कुमार सिंह, सुमन देवी, निर्मला देवी, गणेश कुमार, उदय कुमार रवि, रैन अचल सिंह, जटेश्वर आचार्य, नीरज कुमार सिंह, कृष्णा देवी तथा डॉ. नरेंद्र कुमार द्वारा दिए गए परिसाक्ष्य पर आधारित है। इसके अतिरिक्त, 2005 की सत्र विचारण सं. 866 का अभिलेख, जिसमें अपीलार्थी स्वयं विचारण का सामना कर चुका था, माननीय दण्डाधिकारी द्वारा तलब किया गया तथा परीक्षण किया गया। इस प्रकार दण्डाधिकारी ने इस तथ्य का भी संज्ञान लिया कि उसी घटना के संबंध में अन्य न्यायालय में विचारण लंबित था। परिवादी तथा अन्य साक्षियों द्वारा जांच में दिए गए साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात माननीय दण्डाधिकारी ने निम्न आदेश पारित किया :

> "उपर्युक्त विवेचना के आधार पर यह पाया जाता है कि अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही करने हेतु अभिलेख पर सामग्री उपलब्ध है। इस वाद के समस्त अभियुक्त व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 395 के अंतर्गत प्रथम दृष्ट्या प्रकरण निर्मित होता है। ओ/सी को आवश्यक अभ्यावेदन दाखिल किए जाने पर समन निर्गत किए जाने का निर्देश दिया जाता है। अभिलेख को दिनांक 13.8.2008 को आवश्यक अभ्यावेदन दाखिल किए जाने हेतु प्रस्तुत किया जाए।"

16. उच्च न्यायालय ने उपर्युक्त साक्ष्य का संज्ञान लिए बिना, इस तकनीकी आधार पर कि द्वितीय विरोध याचिका पोषणीय नहीं थी, दण्डाधिकारी के आदेश को अपास्त कर दिया, इस तथ्य पर विचार किए बिना कि प्रथम विरोध याचिका अंतिम प्रतिवेदन के दाखिल होने

से पूर्व दायर की गई थी और सक्षम नहीं थी। इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय ने बिना किसी औचित्य के निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं :

> "न्यायालय केवल यह अभिलेखित कर सकता है कि माननीय न्यायिक दण्डाधिकारी ने निष्पक्ष ढंग से आचरण नहीं किया, क्योंकि माननीय न्यायिक दण्डाधिकारी ने जानबूझकर आक्षेपित आदेश को इस संबंध में अस्पष्ट रखा कि माननीय न्यायिक दण्डाधिकारी किस विरोध याचिका पर कार्य कर रहे थे, ताकि विपक्षी संख्या 2 को लाभ प्राप्त हो सके।"

17. इस न्यायालय की दृष्टि में, दण्डाधिकारी के विरुद्ध इस प्रकार की व्यापक टिप्पणियाँ करने का कोई अवसर उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं था तथा उक्त टिप्पणियाँ वाद के तथ्य एवं परिस्थितियों में अनुचित एवं अवांछित हैं।

18. उपर्युक्त के परिप्रेक्ष्य में, दांडिक अपील आगे बढ़ाई जाती है तथा अनुज्ञात की जाती है। उच्च न्यायालय का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है तथा दण्डाधिकारी का आदेश पुनर्स्थापित किया जाता है। उत्तरदाता संख्या 1 को निर्देशित किया जाता है कि उत्तरदाता संख्या 1 दिनांक 1.12.2011 को दण्डाधिकारी के समक्ष उपस्थित हो तथा माननीय दण्डाधिकारी से अनुरोध किया जाता है कि विधि के अनुसार कार्यवाही आगे बढ़ाई जाए। तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि इस निर्णय में की गई कोई भी टिप्पणी उत्तरदाता के उस अधिकार को पूर्वाग्रह से प्रभावित नहीं करेगी, जिसके अंतर्गत उत्तरदाता विधि द्वारा अनुमन्य किसी अन्य अनुतोष की मांग कर सकता है, क्योंकि उक्त टिप्पणियाँ केवल वर्तमान विवाद के निस्तारण के उद्देश्य से की गई हैं।

आर.पी. अपील अनुज्ञात।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।